161(क)लेख – भारत की गुट निरपेक्षता, यथार्थ या धोखा
(ख)साजिद रशिद द्वारा सिम्मी के विरूद्व महत्वपूर्ण विवेचना।
(ग) उमा भारतीय पर मेरी आलोचना।
(घ) शबाना आजमी तथा अन्य मुसलमानों में पक्षपात संबंधी आरोप पर मेरी विस्तृत समीक्षा ।
(च) बजरंगदल के दो आतंकवादियों की मृत्यू पर मेरी समीक्षा।
(छ) कृष्ण कुमार जी सोमानी द्वारा पेट्रोल,डिजल की मूल्य वृद्धि का विरोध और मेरा उत्तर।
(ज) रामतीर्थ अग्रवाल द्वारा ज्ञानतत्व को प्रशंसा और मेरा उत्तर।
(झ) कृष्ण कुमार जी सोमानी द्वारा नयी पंचायत व्यवस्था का सुझाव और मेरा उत्तर।

(क)भारत की गुट निरपेक्षता,यथार्थ या धोखा?

दुनियॉ में तीन प्रकार की शासन प्रणालीयां हैं, जिनमें से लोक स्वराज्य प्रणाली तो अभी कल्पना लोक मे ही है किन्तु तानाशाही अभी कार्यरत हैं। दोनों के अपने गुण –दोष हैं । लोकतंत्र एक कठिन प्रणाली है, जबकी तानाशाही ही आसान और सुविधा जनक। लोक तंत्र मे संचालक और संचालित के बीच की दुरी न न्यूनतम होती है और तानाशाही मे अधिकतम। लोकतत्र यदि ठीक से न आकर आध अधुरा आया तो अव्यवस्थित होकर तानाशाही की आवश्यकता महसूस होने लगती है जबकी तानाशाही में ऐसा कोई खतरा नहीं। फिर भी लोकतंत्र और तानाशाही के बीच लोकतत्र को आदर्श भी माना जा रहा हैं और विस्तार भी हो रहा है जबकि तानाशाही मजबूरी भी मानी जाती है और सिकुड भी रहीं है।

भारत मे स्वतत्रता के समय ही लोकतंत्र का मार्ग अपनाया। गांधी लोकतंत्र का अर्थ समझते थे, जबकि देश की स्वतंत्रता के लिये संघर्षरत अन्य अधिकांश नेता न लोकतंत्र को समझते थे न लोक स्वराज्य को। वे तानाशाही प्रवृति के थे जिन्हें मजबूरी में लोकतंत्र के लिये समझौते फार्मूला स्वीकार करना पडा। नेहरू, पटेल, अम्बेडकर के तो लोकतंत्र स्वभाव मे ही नहीं था लोहिया जी की सोच तो ठीक थी, स्वभाव का पता नहीं और जयप्रकाश जी लोकतंत्र को समझते भी थे और स्वभाव भी था किन्तु अलग थलग कर दिये गये। ऐसे तानाशाह प्रवृति के शासकों ने मिलकर भारत मे लोकतंत्र लागु किया और विदेश निती बनाई। तानाशाही का लोकतांत्रिक तरिके से बढाने का सबसे अच्छा नारा होता है राष्ट्रवाद। भारत के इन शासको ने राष्ट्रवाद का नारा दिया

। संघ परिवार ने इसे सबसे अधिक उछाला अम्बेडकर जी ने जातीवाद को अपना शस्त्र बनाया और नेहरू जी ने समाजवाद को। पश्चिमी देश मे समाजवाद लोकतंत्र का संशोधित स्वरूप है जो पूंजीवाद स टकराता है जबकि नेहरू जी का समाजवाद लोकतंत्र के विकल्प के रूप में आना चाहता था। स्वभाविक ही था कि ऐसे समाजवाद लोकतंत्र की विदेश नीति भी भिन्न ही होती जिनके शासकों की प्रवृति तो तानाशाह है किन्तु उन्होने आपसी समझौते के अन्तरर्गत लोकतंत्र अपनाया हुआ है। शीघ्र ही भारतीय विदेश नीति स्पष्ट हुई और उसने गुट निरपेक्षता के नाम से एक अलग राह पकड़ी। उस समय दो स्पष्ट गुट बने हुए थे – **(1)**लोकतांत्रिक देश **(2)**साम्यवादी देश। इन दोनों गुटों के व्यवस्थित संगठन थे। बीच में अनेक तानाशाह थे जो अपनी अलग–अलग विदेश नीति बनाते थे और दोनों गुटों से तालमेल रखते थे। इनका कोई व्यवस्थित संगठन नहीं था। भारत बीच में एक ऐसा देश था जो लोकतंत्र को मानता तो था पर जानता नहीं था। भारत ने पूंजीवादी लोकतंत्र और साम्यवादी तानाशाही के बीच स्वयं को गुट निरपेक्ष राष्ट्रघोषित कर दिया और बीच के राष्ट्रों को अपने साथ मिलाकर एक तीसरा गुट बनाने की कोशि करने लगा।

भारत एक लोकतांत्रिक देश है और लोकतंत्र स्वयं में लोकस्वराज्य और तानाशाही के बीच का मार्ग होता है। लोकतंत्र और तानाशाही के बीच तटस्थता कैसे संभव है। लोकतांत्रिक देशों के बीच यदि कोई गुट बनते हैं तो ऐसी गुटबन्दी में भारत तटस्थ भी रह सकता था क्योंकि वहॉ टकराव सैद्धांतिक न होकर व्यावहारिक कार्य प्रणाली पर होता है, किन्तु यदि सैद्धांतिक मुद्दे पर ही दो गुट बनते हैं तो उसमें गुट निरपेक्षता कैसी। तानाशाही और लोकतंत्र दो विपरीत शासन प्रणालियॉ हैं। इनमें से भारत ने लोकतंत्र का मार्ग अपनाया है। भारत तानाशही के बिल्कुल विरूद्ध है। ऐसी स्थिति में तानाशाही को एक गुट मानकर लोकतंत्र और तानाशाही के बीच गुटनिरपेक्षता लोकतंत्र के साथ धोखा है, विचार नहीं। यदि आप मानते हैं कि साम्यवाद तानाशाही न होकर भिन्न प्रकार का लोकतंत्र है अथवा लोकतांत्रिक देश लोकतंत्र न होकर भिन्न प्रकार की तानाशाही है तब तो आप वास्तविक लोकतंत्र का नारा देकर गुट निरपेक्ष बन सकते हैं किन्तु यदि आप मानते हैं कि अमेरिका आदि देश वास्तव में लोकतांत्रिक है और साम्यवादी तानाशाह तब किसी भी स्थिति में गुट निरपेक्षता तो हो ही नहीं सकती। किन्तु भारत ने लोकतंत्र में शामिल रहते हुए लोकतेंत्र और तानाशाही के बीच गुट निरपेक्ष बने रहने और तीसरा गुट बनाने की सफलता का अजूबा कर दिखाया।

परिणाम भारत के लिए हितकर हुआ। भारत को अमेरिका आदि पूंजीवादी देशों से भी समर्थन सहयोग मिला और रूस, चीन आदि साम्यवादी देशों से भी। बीच के अनेक देश तो गुटनिरपेक्ष आंदोलन के सदस्य भी बन गये थे। भारत ने दो गुटों के बीच गुट निरपेक्षता का खूब मजा उठाया। किन्तु सिद्धांत विहीन मजा उठाने के कुछ दोष भी तो झेलने पड़ते हैं। इसी नीति का परिणाम हुआ कि भारत में राष्ट्रवाद मजबूत हुआ और समाजवाद कमजोर। भारत ने समाजवाद की भी एक नई परिभाषा बना दी।

इस नई परिभाषा ने तो समाजवाद शब्द को ही विवादास्पद बना दिया। इस नीति के कारण भारत का लोकतंत्र लोकस्वराज्य की दिशा में न जाकर अव्यवस्था की राह पर चल पड़ा जिसका परिणाम हुआ'' तानाशाही की दिशा में बढ़ने की मजबूरी''। यदि इस दिशा में बढ़ रही राजनैतिक व्यवस्था का आकलन करें तो आज किसी भी राजनैतिक दल में आन्तरिक लोकतंत्र लगभग शून्यवत् हो गया है। आंशिक रूप से जनता दल यू. में कह सकते हैं जो अव्यवस्था का शिकार हैं। यदि कोई राजनैतिक दल जरा भी लोकतंत्र की दिशा में सोचता है तो तुरन्त ही अव्यवस्था या आन्तरिक टकराव का शिकार बन जाता है और तानाशाही की ओर लौट जाता है। भाजपा भी इसे आजमा चुकी है और कांग्रेस भी। यदि शासन प्रणाली के आधार पर समीक्षा करें तो वर्तमान में तीन प्रदशों की सरकारें ही उल्लेखनीय सफलता की दिशा में बढ़ रही है।

1. गुजरात की नरेन्द्र मोदी सरकार जो धर्म और पूंजीवाद को मिलाकर तानाशाही से सफल व्यवस्था चला रही है।
2. बंगाल की भट्टाचार्य सरकार जो साम्यवाद की तानाशाही के सहारे इतने वर्षो तक सफल रही और तानाशाही में आंशिक ढील देते ही लड़खड़ाने लगी।
3. बिहार की नीतिश सरकार जिसे अभी थोड़े ही दिन बीते हैं। इसने अवश्य ही अब तक बिना तानाशाही के आंशिक प्रगति की है।

गुजरात सरकार की तानाशाही को वहॉ पूरा–पूरा जन समर्थन है और बंगाल सरकार को भी जन समर्थन तो है ही भले ही थोड़ा सा कम हो गया हो। बिहार एक मात्र ऐसा प्रदेश है जहां तानाशाही न होते हुए भी व्यवस्था सुधर रही है। मैं अभी अगस्त माह में ही उत्तर बिहार का दस दिनों का व्यापक दौरा करके लौटा हूॅ तो वहॉ लोकतंत्र और व्यवस्था को एक साथ बढ़ते हुए अनुभव किया, यद्यपि ये दोनों भारत में एक साथ बढ़ते नहीं। इसे सफलता द्योषित करना अभी जल्दबाजी ही कही जाएगी किन्तु अब तक तो लक्षण ठीक ही हैं। भारत की केन्द्र सरकार या अन्य राज्य सरकारें किसी तरह टाइम पास कर रही हैं। यह है गुटनिपेक्ष भारत की आन्तरिक शासन व्यवस्था जिसने भौतिक उन्नति तो खूब बढ़ाई किन्तु भारत में लोकतंत्र लगातार कमजोर हो रहा है और भारत अव्यवस्था की ओर बढ़कर तानाशाही समाधान की प्रतीक्षा कर रहा है।

जब दुनिया में शीत युद्ध समाप्त हुआ और साम्यवाद ने हार मान कर टकराव का मार्ग छोड़ा तो भारत के समक्ष भी एक अच्छा अवसर था। भारत तेजी से लोकतंत्र को आदर्श मानकर लोकतांत्रिक देशों के साथ जुड़ सकता था। इस जुड़ाव से कई लाभ होते –

1. दुनिया में अमेरिका की दादागिरी के समक्ष रूस, चीन, फ्रांस , जर्मनी, भारत आदि की एक सशक्त चुनौती होती है।

2. दुनिया में तानाशाही का पक्ष कमजोर होता और अन्य देश भी लोकतंत्र की दिशा में झुकते।
3. भारत की आन्तरिक अव्यवस्था कम होती जाती।

किन्तु भारत गुटनिरपेक्षता के चक्कर में इस सुनहरे अवसर से चूक गया। इराक युद्ध ने ऐसा सुनहरा अवसर दिया भी था कि हम इराक युद्ध का विरोध न करके अमेरिका के विरूद्ध रूस, चीन, फ्रांस, जर्मनी आदि का साथ दिये होते। एक सम्ममानजनक अवसर था। किन्तु हम तटस्थ हो गये। पूरे इराक युद्ध में हम अमेरिका के विरूद्ध थे या समर्थक यह पता ही नहीं चला। खाड़ी देशों के साथ तेल की गुलामी और गुटनिरपेक्षता की स्वार्थपूर्ण प्रशंसा ने हमें तानाशाही के विरूद्ध साफ स्टैण्ड लेने से रोक दिया। हम दुहरा खेल खेलने लगे अर्थात् अन्दर–अन्दर अमेरिका का व्यावहारिक समर्थन और बाहर–बाहर अमेरिका का सैद्धान्तिक विरोध। परिणाम बहुत खतरनाक हुआ।

अमेरिका के विरूद्ध लोकतांत्रिक देशों का गुट कमजोर हो गया और भारत का रूख साफ न होने से खाड़ी देशों की तानाशाही को प्रोत्साहन मिला । इस समय भारत की गुटनिरपेक्षता ने भारत को ऐसी मजबुर स्थिति में ला खड़ा किया है कि इरान के विरूद्ध यदि कोई एक भी शब्द बोलता है तो भारत को इरान के पक्ष में आवाज उठाने की पहल करनी पड़ती है। चाहे दुनिया का कोई भी और देश न बोले पर भारत को तो बोलना ही पड़ता है क्योंकि भारत तेल और गैस के लिए भी खाड़ी देशों पर निर्भर है और गुटनिरपेक्षता की सदस्यता के आधार पर भी। आज भारत की आन्तरिक राजनीति में ये खाड़ी देश अन्दर तक हस्तक्षेप करते हैं और हम चुप रहते हैं। अभी पिछले माह परमाणु समझौते पर मतदान के पूर्व प्रधानमंत्री पद की संभावित उम्मीदवार मायावती जी ने तेहरान फोन करके वहॉ के कुम से व्यापक चर्चा की। यह चर्चा भारत के कुछ मुस्लिम धर्मगुरूओं की उपस्थिति में हुई और तेहरान ने मायावती जी को आवश्यक सलाह दी। इस फोन चर्चा में उत्तर प्रदेश सरकार के एक कलेक्टर भी शामिल रहे। मैं नहीं समझता कि तेहरान इस समझौते में कौन–सा पक्ष था जो इतनी रूचि ले रहा था। क्या तेहरान का लोकतांत्रिक पक्ष भारत से भी अच्छा है जो भारत को ऐसे मामले में सलाह दे रहा है? निश्चित ही नहीं है । किन्तु हमारी लोकतंत्र के लिए अस्पष्ट अवधारणा ने हमें इतना मजबूर कर दिया है कि हमारे देश के उम्मीदवार प्रधानमंत्री पद के लिए कहीं भी किसी से भी बात करने को तैयार बैठे हैं और पूरे देश में कोई आवाज तक नहीं उठी। दुनिया में अमेरिका मजबुत हो रहा है क्योंकि अमेरिका लोकतंत्र का नेतृत्व कर रहा है। अमेरिका को चुनौती लोकतंत्र की चुनौती मानी जा रही है। सिद्धान्त विहीन तानाशाह मुस्लिम देश लोकतंत्र की राह में आगे बढ़ने के स्थान पर लोकतंत्र के विरूद्ध टकराने की असफल कोशिश में लगे हैं। सद्धाम हुसेन इसी तरह अकड़ते गाली देते और पिटते रहे। परिणाम दिख गया। इरान का क्या

होगा यह पता नहीं। लोकतंत्र की हवा में तानाशाही के तो ऐसे परिणाम होने की हैं। बीच में भररत अनावश्यक मोह में पड़ा हुआ है। भारत को ऐसी स्थिति में अमेरिका की भी चापलूसी करनी पड़ रही है और मुस्लिम तानाशाओं की भी । यदि भारत ऐसी स्थिति से निकल जाता है तो बहुत अच्छा होता। हो सकता है कि भारत अमेरिकी दादागिरी के विरूद्ध अन्य लोकतांत्रिक अव्यवस्था से बच पाता या हो सकता है कि भारत लोक स्वराज्य की दिशा में कुल बढ़ पाता। जो भी होता वह अच्छा ही होता। वामपंथियों द्वारा जोर आजमाइश करके हार जाने के बाद तो अब बहुत अच्छा अवसर है। भारतीय राजनीति में सरकार चाहे मनमोहन सिंह जी की बने या आड़वाणी जी की किन्तु बनेगी लोकतांत्रिक सोच वालों की ही। इन्हें चाहिए कि ये स्पष्ट रूप से अपनी विदेश नीति को बदलकर लोकतंत्र के पक्ष में घोषित कर दें। हिम्मत का काम तो है। एक से एक विश्व राजीनति के समीकरण बदलने लगेंगे। इस्लामिक कटटरवाद की जड़ें कमजोर होने लगेंगी और तब हम सिर उठकर कह सकेगे कि भारत में वास्तव में लोकतंत्र है ।

हमारे देश के शासकों को सबसे पहले लोकतंत्र को अन्दर तक समझना होगा। लोकतंत्र की चरम आदर्श स्थिति लोक स्वरज्य ही है। यह एक जीवन पद्धति होती है, शासन पद्धती नहीं। इसमें समाज भेड़, बकरी न होकर मालिक होता है और राज्य मालिक न होकर मैनेजर। अपने को प्रबंधक की जगह प्रशासक समझने वाले ये भारतीय नेता न लोकतंत्र को समझना चाहते हैं न जानना। यही कारण है कि भारत कोई निर्णायक पहल करने की स्थिति में नहीं है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि भारत एक आदर्श लोकतंत्र बने और दुनिया को अमेरिकी दादागिरी से मुक्त कराकर सच्चे लोकतंत्र को मजबूत करें।

(ख)प्रश्न — जनसत्ता चौबीस अगस्त में साजिद रशीद जी का एक लेख छपा है जिसमें उन्होंने सिमी को आतंकवादी संगठन प्रमाणित करने के लिए गंभीर तर्क प्रस्तुत किये हैं। आप लिखते रहे हैं कि मुसलमानों की स्वाभाविक सहानुभूति सिमी से है। आप बताइये कि साजिद भाई के लेख के बाद आपकी सोच में क्या बदलाव आया है?

उत्तर — मैने उक्त लेख मंगाकर पढ़ा लेख में बहुत सी ऐसी जानकारी है जो मेरी जानकारी में थी ही नहीं यथा –

1. सिमी के लेटर हेड पर जो चिन्ह अंकित है उस पर पृथ्वी पर कुरान रखकर कुरान पर ए0के0 सैंतालीस रखी हुई है।

2. सिमी की स्थापना के समय उसके पांच उद्धेश्य घोषित किये गये थे –अल्लाह हमारा मकसद, रसूल हमारा रहबर, कुरान हमारा कानून, जिहाद हमारा रास्ता, शहादत हमारी मंजिल।

3. सिमी की स्थापना सन् 77 में मोहम्मद अहमदुल्ला सिद्धीकी ने की थी कुछ ही वर्षो बाद उन्होंने अनुभव किया कि सिमी तेजी से आतंकवाद की दिशा में जा रहा है तो उन्होंने उससे अपना संबंध तोड़ लिया।

4. उन्नीस सौ छियान्नवे में अफगानिस्तान में तालिबान का शासन स्थापित होने के तत्काल बाद ही सिमी ने पोस्टरों, पर्चो के द्धारा भारत में भी वैसा ही करने का एलान कर दिया था।

5. 29 अक्टुबर 1999 को कानपुर में सिमी का राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ जिसमें करीब बीस हजार लोग शामिल हुए। इस सम्मेलन को हमास नेता शेख यानी अहमदी ने फिलीसतीन से फोन द्धारा तथा पाकिस्तान जमायते इस्लामी के नेता काजी हुसेन अहमद ने पाकिस्तान से संबोधित किया था।

6. भारत का उर्दू मीडिया एक पक्षीय रूप से ओसामा, तालिबान या सिमी को महिमा मंडित करता है। उर्दू के मुसलमान पाठकों पर इसका एकपक्षीय प्रभाव भी पड़ता है। तहलका ने भी अभी–अभी सिमी को क्लीन चिट देने वाली जो रिपोर्ट प्रकाशित की है वह उर्दू मीडिया में प्राथमिकता के आधार पर छप रही है।

मुझे तो लेटर हेड का चित्र देखकर आश्चर्य हुआ कि कोई संगठन पवित्र धर्म ग्रन्थ के ऊपर ए0के0 सैंतालिस रखकर अपना लोगो प्रसारित करता है और मुलायम, लालू प्रसाद जैसे लोग ऐसे संगठन को शान्तिप्रिय धर्म निरपेक्ष घोषित करते हैं। भारत सरकार ने जिस नागौरी का नार्को टेस्ट कराया उसके पहले ही वह मुलायम,लालू प्रसाद का नार्को टेस्ट कराए। उसके पहले ही यदि मुलायम, लालू प्रसाद का नार्को टेस्ट हो गया होता तो बहुत पहले ही बहुत सा छिपा रहस्य खुल गया होता।

मैंने यह कहीं नहीं लिखा है कि सभी मुसलमान आतंकवादी हैं या आतंकवाद से सहानुभूति रखते है। मैंने बार–बार लिखा है कि भारत में तीन संगठन उग्रवाद की लाईन में सक्रिय हैं – **1**. सिमी **2** संघ **3.** नक्सलवाद। तीनों को तीन समूहों से स्वाभाविक सहानुभूति मिलती है। **1.** सिमी को मुसलमानों से **2** संघ को हिन्दुओं से **3.** नक्सलवाद को कम्युनिस्टों से। सिमी का लक्ष्य भारत को दारूल इस्लाम बनाना है और मार्ग है बन्दुक। नक्सलवाद का उद्धेश्य भारत में साम्यवादी शासन व्यवस्था स्थापित करना है और मार्ग है बन्दूक। संघ भारत को हिन्दू राष्ट्र बनाना चाहता है और मार्ग है त्रिशुल या डंडा। सिमी को भारत में

यदि 75 प्रतिशत मुसलमानों की सहानुभूति मिलती है तो नक्सलवादियों को 75 प्रतिशत साम्यवादियों की। संघ को हिन्दुओं की स्वाभाविक सहानुभूति का प्रतिशत पंद्रह–बीस से अधिक नहीं होगा। एक बात और है कि मुस्लिम आतंकवाद के विरूद्ध बोलना किसी मुसलमान के लिए उतना आसान नहीं जितना संघ के बोलना किसी हिन्दू का बोलना आसान है। आप स्वयं मानते हैं कि पूरा का पूरा उर्दू मीडिया एक खास दिशा में सक्रिय है। ऐसी संकीर्णता हिन्दी या अंग्रेजी मीडिया में संघ के प्रति नहीं है। आपने सिमी के विरूद्ध लिखकर उसकी जो जानकारी उपलब्ध कराई है उसके लिए आपको और हिंसा के विरूद्ध वातावरण बनाने में शान्तिप्रिय मुसलमानों और शान्ति प्रिय साम्यवादियों को अधिक हिम्मत दिखानी होगी। खुशी है कि आप या सोमनाथ चटर्जी सरीखे लोगा हिम्मत भी कर रहे हैं। संघी उग्रवाद तो हमलोग निपटा भी रहे हैं और निपटा भी देंगे किन्तु इस्लामिक उग्रवाद या आतंकवाद के विरूद्ध हमारे प्रयत्न मुसलमानों में कटुता पैदा करते हैं और संध का उत्साह वर्धन। ये दोनों की घातक हैं। इसलिए इस विषय पर हमें बहुत सर्तक रहना पड़ता है।

मैं आपको पुनः आश्वस्त कर दूं कि विचार प्रस्तुत करते समय मेरी विवेचना मुस्लिम उग्रवादियों की अपेक्षा संघ के विरूद्ध अधिक ही कठोर होती है। फिर भी यदि यथार्थ वैसा ही है तो मैं इसमें क्या कर सकता हूँ।

(ग)प्रश्न — पिछले दिनों सन्यासिन राजनेता उमा भारती ने प्रेस कांफ्रेंस करके नकली सीडी प्रस्तुत की और भेद खुल गया। आप सन्यासिन उमा के इस कृत्य को किस तरह देखते है?

उत्तर — आपने सन्यासिन राजनेता उमा भारती कहा जो पूरी तरह भारतीय परंपरा के विरूद्ध है। सन्यासी राजनीतिज्ञ तो हो सकता है परन्तु राजनेता नहीं हो सकता। गांधी और जयप्रकाश राजनीतिज्ञ थे राजनेता नहीं। जब भारतीय परंपरा में ब्राम्हण तक को राजनेता बनने से रोका गया था तो सन्यासी तो उससे भी कई गुना ऊपर होता है। वैसे तो आर्य समाज के भी कई गेरूआ वस्त्रधारी सांसद रह चुके हैं या आज भी सक्रिय हैं। उमा जी भी उसी तरह एक हैं।

वैसे तो उमा जी ने जब से गेरूआ वस्त्र धारण किया तब से ही कभी सन्यास के प्रति विश्वसनीय नहीं रही। पहले तो हम लोग उनकी व्यक्तिगत कमजोरियॉ सुनते थे जिनका न कोई प्रमाण था न प्रमाण की आवश्यकता। यदि ऐसा हो भी तो विशेष बात नहीं। इस बार के संसद

घुस कांड में अमरसिंह जी के साथ गठजोड़ और सीडी के नकली होने के प्रमाणित होने के बाद तो उमा जी के गेरूआ वस्त्र पर भी शंकाएं उठने लगी हैं। यदि कोई गेरूआ बस्त्रधारी राजनीति में जाता भी है तो उसे कुछ तो सीमाएं बनानी ही चाहिए। यदि अमरसिंह ,मुलायम सिंह के समान ही राजनीति करनी है तो किसने रोका है आपको गेरूओ वस्त्र छोड़कर मैदान में उतरने से। मुझे बहुत उम्मीद थी की गेरूआ वस्त्रधारी उमा जी कुछ राजनीति का शुद्धिकरण कर दिया है। मैंने टीवी में सांसद घूस प्रकरण के संबंध में उनकी प्रेस वार्ता सुनी तो सिर बहुत ऊॅचा हुआ कि एक गेरूआ वस्त्रधारी ने हिम्मत का काम किया। दो घंटे बाद ही टीवी में जब अशोक अर्गल जी के धर के बाहर चिपका पोस्टर दिखा तो सिर शर्म से झुक गया और जब उसी रात को ट्रेन से जम्मू जा रही उमा जी से टीवी वाले से प्रश्नोत्तर में उमा जी को घिघियाते सुना तो टीवी बन्द करने के अलावा कोई उपाय नहीं था। मेरी तो सलाह है कि उमा जी अब भारतीय संस्कृति पर कृपा करते हुए अपने गेरूआ वस्त्र और राजनीति में से एक को चुन सकें तो बहुत अच्छा होता।

(घ)प्रश्न —प्रसिद्ध सिने कलाकार शबाना आजमी ने अपने मन की पीड़ा व्यक्त करते हुए कहा कि भारत में मुसलमानों को दूसरे दर्जे का नागरिक माना जाता है। उन्हें सामान्य रूप से किराये पर मकान या सम्पत्ति खरीदने में भी कठिनाई होती है। यहां तक कि बम्बई जैसे शहर में भी उन जैसी कलाकार को ऐसे संकट से जूझना पड़ता है। शबाना जी के बयान पर एक बहस चल पड़ी है कि उनका बयान कितना सच है? कुछ हिन्दुवादी संगठन तो शबाना जी से क्षमा मांगने तक की बात कर रहे हैं। आप इस संबंध में यथार्थ से अवगत कराइये।

उत्तर — शबाना आजमी के प्रति मेरे मन में अच्छी भावना रही है। उन्होंने यथार्थ को कहीं तोड़ा–मरोड़ा नहीं हैं। विवेचन में अन्तर स्वाभाविक है।

भारत में मुसलमानों के साथ हिन्दुओं का व्यवहार समान नहीं है यह बात सच है। मैंने यद्यपि अपनी जमीन बेचते समय ऐसा कोई भेद भाव नहीं किया किन्तु मुझे बहुत से शुभचिन्तकों ने इस समानता के प्रति सतर्क किया। मेरे शुभचिंतकों के तर्को में दम था।

1. पांच हिन्दु पड़ोसियों के बीच एक मुस्लिम परिवार जितने आराम से रह पाता है उतने आराम से पांच मुस्लिम परिवारों के बीच एक हिन्दु परिवार नहीं रह पाता।

2. मुसलमान पड़ौसी से एक खास खतरा होता है कि उसका नौजवान हिन्दू लड़की से संबंध बनाने में उतनी कठिनाई नहीं महसूस करता जितना हिन्दू नौजवान। हिन्दू परिवार अपने लड़के की राह में बाधा पैदा करते हैं और मुसलमान सहायता। परिणाम स्वरूप हिन्दू परिवारों को अपनी लड़कियों की सुरक्षा का विशेष ख्याल रखना पड़ता है।

3. मुसलमान हिन्दुओं के साथ राजनैतिक व्यवस्था में समानता का व्यवहार ना पसंद करता है। वह हमेशा अपने को अल्प संख्यक मानकर संगठित रहना चाहता है। हिन्दू ऐसे भेद–भाव को नापसंद करता है और जब मुसलमान समानता को स्वीकार नहीं करता तो फिर असमानता स्वाभाविक है आपको समाज से समान व्यवहार भी चाहिए और कानून से विशेषाधिकार भी। ये दुहरा आचरण वह क्यों जीना चाहता है।

4. हिन्दू इस बात को पसंद नहीं करता कि उसका पडोसी राजनैतिक मामलों में नासमझ होते हुए भी विदेशी राजनीति से संचालित हो। हमारे गांव के साधारण लोगों को कभी पता ही नहीं चलता कि अमेरिकी राष्ट्रपति बुश कब भारत आये और कब गये। एक उससे भी कम समझ का मुसलमान इन मुद्दों में गहरी रूचि रखता है।

ऐसे कुछ कारण है जिनके कारण हिन्दू अपने पड़ौस में मुसलमान को बसाने के पहले दस बार सोचता है। मेरे अपने घर के आसपास बड़ी संख्या में आदिवासी गांव हैं और एक मुस्लिम बहुत गांव है कनकपुर। मैंने और आर0एन0 सिंह जी ने एक प्रयोग किया कि पांच सौ लोगों को बहुत कम ब्याज पर दो सौ से पांच सौ रूपये तक का उधार दिया। पैसा वापस करने में कोई कठोरता नहीं थी। हिन्दुओं का पैंतालीस प्रतिशत पैसा वापस आया और मुसलमानों का पांच प्रतिशत। सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि कनकपुर गांव के लोगों ने सबसे अधिक उधार लिया और उनमें से किसी भी मुसलमान ने नहीं लौटाया। मैं इस उदाहरण से मुसलमानों को बेईमान नहीं बताना चाहता, क्योंकि मेरे अपने शहर में आर्थिक ईमानदारी में मुसलमानों का ग्राफ हिन्दुओं से ऊपर है। मैंने जो निष्कर्ष निकाला वह यह है कि ये अतिवादी होते हैं। यदि उन्हें ईमानदारी समझ में आ गई तो अतिवादी ईमानदार होंगे और यदि बेईमानी की राह पकड़ ली तो फिर आप कुछ नहीं कर सकते।

विचारणीय प्रश्न यह है कि हिन्दू मुसलमान को पड़ौसी बनाने से घृणा करता है या डरता है। मेरे विचार में हिन्दू डरता है। मुसलमानों से हिन्दू भेदभाव करता है इसका उत्तर शबाना जी हिन्दुओं से न जानकर पहले मुसलमानों से ही क्यों न जाने? आप अपने को अल्पसंख्यक घोषित करके विशेषाधिकार की जिद पर क्यों हैं? हिन्दू कैसे आपके साथ समान व्यवहार करे। आप अपने व्यवहार से यह क्यों नही प्रमाणित कर सकते कि उनके

बच्चों को हिन्दू लड़कियों के साथ संबंध बनाने को मुसलमान वर्ग निरूत्साहित करेगा। यदि मेरा पड़ोसी इराक और अमेरिका की मेरे सुख–दुख से ज्यादा चर्चा और चिन्ता करेगा तो उसे अपने सुख–दुःख में मेरी समानता की क्यों उम्मीद करनी चाहिए। मेरे विचार में साम्प्रदायिक हिन्दू शबाना जी के सच को गलत सिद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं। और साम्प्रदायिक मुसलमान इस बयान के लिए हिन्दुओं को दोषी ठहरा रहे हैं। मेरे विचार में दोनों ही गलत है। शबाना जी अपने निष्कर्षो के कारणों की नये तरीके से विवेचना करें। विशेष रूप से मुसलमानों की इस आदत की कि मेरे पास जो कुछ है वह तो मेरा ही है। आप या हिन्दू मुसलमानों के साथ प्रेम और भाईचारा का ढोंग करने की अपेक्षा यथार्थ पर बात करें। शबाना जी ने इस विचार मंथन का एक अवसर हमें उपलब्ध कराया है।

शबाना जी इस स्पष्टोक्ति के लिए बधाई की पात्र हैं। खुलकर विचार मंथन एक बहुत अच्छी बात है। शत्रुघन सिन्हा या ऐसे ही कुछ और लोग जो शबाना जी के यथार्थ की निन्दा कर रहे हैं वे वास्तव में कोई हिन्दू न होकर किसी साम्प्रदायिक संगठन से जुड़े लोग हैं जिनके पास न तर्क होता है न तर्क शक्ति। वे तो सिर्फ डंडे से ही बात करना जानते हैं। इसलिए उचित है कि हिन्दू–मुस्लिम सामाजिक व्यवहार के मूद्दे पर शबाना जी की पीड़ा को समझें और मेरे और शबाना जी सरीखें लोग मिलकर इस संबध में क्या कर सकते हैं इस पर विचार करें।

(च)प्रश्न– पिछले दिनों कानपुर उत्तर प्रदेश में बस बनाते समय बजरंगदल के दो कार्यकर्ताओं की मौत हो गई। दोनों हिन्दुवादी संगठन आर.एस.एस. की ही एक उग्रवादी शाखा बजरंगदल के सदस्य थे। आप सिमी की आलोचना करते–करते इस्लाम तक की आलोचना करने लगते हैं। अब इस कानपुर की घटना के बाद आप क्या कहेंगे?

उत्तर – संघ किसी भी रूप में हिन्दुओं का प्रतिनिधि नहीं है। उसे हिन्दू बहुमत का न प्रत्यक्ष समर्थन है न परोक्ष। वह एक ऐसे लोगों का समूह है जो इस्लामी विचार धारा के आधार पर चलकर हिन्दुत्व की रक्षा करना चाहता है जो बिल्कुल असंभव है। और यदि हो भी जावे तो हमें ऐसा हिन्दुतत्व नहीं चाहिए। किन्तु सिमी के लिए आम मुसलमानों में परोक्ष समर्थन दिखता है। नेपाल में हिन्दू राष्ट्र गया और लोकतंत्र पर इस्लामिक कट्टरवाद हावी हैं ।मुफ्ती मोहम्मद सईद ने जिन्ना की राह पकड़ ली है। बताइयें कि भारत का मुसलमान। मुफ्ती की आलोचना से दूर क्यों हैं? बजरंग दल की जो बात सामने आई वह साम्प्रदायिक शक्तियों का आपसी मामला है। यदि शेर की सवारी होगी तो जान को खतरा भी बना ही रहेगा। यदि संघ उग्रवाद की राह पर चलता रहा तो जिस तरह आज बजरंग दल के कुछ लोग सामने आये हैं उसी तरह

भविष्य में संघ के भी कुछ लोग सामने आ सकते हैं। पानी में डूबकर मछली निगलने का सुख कभी दुःख में भी बदल सकता है।

आपने यदि यह प्रश्न बजरंग दल की आलोचना के उद्धेश्य से किया है तो मुझे आपके प्रश्न से खुशी हुई है और यदि आपका प्रश्न सिमी के समर्थन के उद्धेश्य से किया गया है तो आपने गलत व्यक्ति से यह प्रश्न किया है। मैं प्रत्यक्ष या परोक्ष संघ से कोई अतिरिक्त सहानुभूति नहीं रखता। मैंने बहुत वर्ष पहले ज्ञान–तत्व मंथन नाम से एक पुस्तक लिखी थी। उसके कुछ अंश बाद में नई दिशा में भी छपे है। मैंने लिखा है कि मेरे विचार में शान्तिप्रिय हिन्दू हमारे सामाजिक आदर्श हो सकते हैं और शान्ति प्रिय मुसलमान हमारे सहयोगी। दूसरी ओर उग्रवादी हिन्दू हमारे विरोधी माने जाने चाहिए और उग्रवादी मुसलमान शत्रु। सिमी और संघ में मैं इतना ही फर्क करता रहा हूँ। इससे अधिक नहीं। इस फर्क का कारण भी मैंने उस किताब में लिखा है किन्तु मेरे विचार व्यवहार में शान्तिप्रिय मुसलमान किसी संघवादी हिन्दू से कई गुना अच्छा है। इन दोनों की कोई तुलना ही नहीं हो सकती। बजरंगदल के लोगों ने जो किया उसके लिए वे दोनों व्यक्ति ही आलोचना के पात्र नहीं है बल्कि वह समूची बिरादरी ही आलोचना की पात्र है, जो ऐसी विचारधारा पर चल रही है।

(छ)श्री कृष्ण कुमार सोमानी, कमानी मार्ग, बलार्ड स्टेट, बम्बई –400001

प्रश्न – आप सिर्फ वर्तमान संविधान पर व्यापक संशोधन तक ही अपने को सीमित रखना चाहते हैं। पर इस संविधान की जड़ ही गुलामी के बीज से निकलती है। मैनें अपनी पुस्तक में इसका पूरा ब्योरा दिया है कि किस तरह यह संविधान अंग्रेजों द्धारा थोपा गया है जो उन्हीं के द्धारा लिखित प्रतिपादित और उनकी साजिश अनुसार हमें हमेशा के लिए पश्चिमी सभ्यता में डालकर गुलाम रखकर नीचे रखने की साजिश है। इसे पूर्णतः हटाकर हमारी आर्य संस्कृति का आधार लिए बिना, देश कभी स्वतंत्र भी नहीं होगा और आगे भी नहीं बढ़ सकेगा। जो अपनी आर्थिक उन्नति की चकाचौध दिख रही है, वह पूर्णतया अस्थाई है। और जैसे अन्य प्रचलित संस्कृतियां खत्म हो गई हैं, वैसे ही यह पश्चिमी सभ्यता अब हमें भी विनाश की तरफ ले जा रही है। इसके सिवाय भी जैसे बहुत ज्यादा संशोधन करने से कोई इमारती ढांचा कमजोर हो जाता है और रहने लायक नहीं रहता। इस तरह इस संविधान को हटाकर नया स्थापित करना ही उचित होगा।

आपने भी खुलासा किया है कि आपका अभी का आंदोलन, दो मुद्दों पर ही केंद्रित है। नही ंतो मेहनत कई भागों में बंट जाएगी और फल कुछ नहीं मिलेगा

। पंचायत राज्य और विकेन्द्रीकरण के पक्षधर सभी राजनीतिक पार्टियां हैं। पर सभी अपने –अपने दिखावें में, अपनी सत्ता कम करने को कई तैयार नहीं है। पंचायतों को शहरी म्युनिसिपैलिटी की तरह कर लगाने की छुट देने से, आर्थिक स्तर पर बहुत बड़ा परिवर्तन आ जायेगा। चुनाव पद्धति बदलने से भ्रष्टाचार पर बहुत बड़ा प्रहार लग सकता है। एक तरफ से दो संशोधन हो गये तो स्वतः ही सब गॉव के लोग राजनीति से जुड़ जाऐंगे और एक बहुत बड़े स्वाभिमान की हवा देश में फैल जाएगी जो कई प्रकार से देश की विकृतियों का उन्मूलन कर सकेंगी।

कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य और बेरोजगारी के विषय में मेरी राय अभी भी आपसे मिली नहीं है। पिछले पत्र में मैंने लिखा था कि इनके मूलय 50 गुने बढ़ गये हैं 50 वर्षो में। पर कई प्रदेशों में ये 100 गुने बढ़ गये हैं – 5 पैसे युनिट से 6 रू0 युनिट तक। अगर मुद्रा स्फीति की दर लगाये तो 6 प्रतिशत चक्रवृद्धि भी पकड़ने पर 50 साल में कीमत 20 गुणा ही होती है, ना कि 50 या 100 गुणा। वैसे भी तेल और कोयला को सीमित उपलब्धि होने से इनकी कीमत और तेजी से बढ़ती ही जाती है। इसके सिवाय हिन्दुस्तान में कृत्रिम ऊर्जा कभी सस्ती रही ही नहीं। डीजल, पेट्रोल में 50 प्रतिशत सरकारी कर हैं कोयला और बिजली में भी काफी टेक्स है और साथ में सरकार की मोनोपोली होने से हमेशा ही इनका भाव दूने से ज्यादा रहा है दूसरे देशों के मुकाबले। और ज्यादा फर्क हो गया तो कई फैक्टरियों को बंद होना पड़ेगा और बेरोजगारी बढ़ेगी।

जिंदगी भर फैक्टरियों में काम करने से मुझे मालिक और मजदूर, दोनों की मानसिकता का पता है। ऊर्जा का मूल्य बढ़ने पर भी मजदूरों के अनुचित दबावों से बचने को मालिक ज्यादा से ज्यादा मशीनीकरण और स्वचालित बनायेंगे। इसके लिए जैसा मैंने अपने पहले के पत्र में लिखा है, दो बातों में सुधार आवश्यक है – **1** मालिक –मजदूर के झगड़ों को निपटाने के लिए हड़ताल इत्यादि पर प्रतिबंध और अन्य सांस्कृतिक उपायों द्धारा चेष्टा –पंचायती या न्याय शासन प्रणाली। **2.** सरकारी इनसेन्टिव को मशीनों के खर्च पर नहीं देकर रोजगारी के आधार पर बनाया जायेगा।

ज्ञान तत्व का 97 अंक व 2002 का प्रस्तावित संशोधन मेरे पास नहीं है। आपने लिखा कि मैं संविधान मंथन पर और लिखूं। पर सभी मुख्य मुद्दों पर अपने विचार लिख दिये हैं। अगर कोई विरोध बिन्दु पर आप मेरे विचार चाहते हैं तो बताएं।

उत्तर – आपने संविधान संशोधन की जगह संविधान परिवर्तन की बात कही है मैं आपके विरूद्ध नहीं। लोकतंत्र में संविधान का शासन होता है, व्यक्ति या

व्यक्तियों का नहीं। यदि कोई व्यक्ति या कुछ व्यक्ति गलत करते हैं और राज्य व्यवस्था उन्हें नहीं रोक पाती तो असफलता संविधान की है, दोष राज्य का और अपराध व्यक्ति का। लोकतंत्र में समाज व्यक्ति को दंडित नहीं कर सकता और राज्य पर भी अंकुश नहीं लगा सकता। क्योंकि एक चैनल बना हुआ है। जिसमें समाज, संविधान, संसद, राज्य, कानून और व्यक्ति ऊपर से नीचे तक जुड़े हैं। लोकतंत्र में सबकी सीमाएं बनी हुई हैं और कोई भी अपनी सीमा से बाहर जाकर कुछ नहीं कर सकता। दुर्भाग्य से भारत में इन सीमाओं को नहीं समझा गया और सभी अपनी–अपनी सीमाएं तोड़कर समाधान करने की पहल करते हैं जो अव्यवस्था का आधार बनता है।

आपने कृत्रिम ऊर्जा पर कुछ बुनियादी प्रश्न उठाये हैं किन्तु आंकड़ों की बात अन्दाज से नहीं चलती। बिजली पांच पैसे से बढ़कर सात रूपयें हुई ऐसा सच नहीं है। पॉच पैसा प्रति यूनिट सिंचाई की बिजली थी जो आज भी सात रूपया नहीं है। मुद्रा स्फीति को आपने सात प्रतिशत मानकर बीस गुना तक अन्दाज लगाया जो गलत हैं। स्वतंत्रता के बाद का रूपया सरकारी रेकार्ड में डेढ़ पैसे से भी कम बचा है अर्थात मुद्रा स्फीति सत्तर गुनी करीब बढ़ी हैं। आंकड़े जुटाना होगा। उस समय चांदी का रूपया था। यदि उससे तुलना करें तो मुद्रा स्फीति दो सौ गुना बढ़ गई है।

आपने तेल और कोयला को महंगा बताया किन्तु आप किसकी तुलना में महंगा होना लिख रहे हैं यह नहीं बताया। तेल और कोयला, गेहूं और चावल की तुलना में महंगा हुआ है और श्रम की तुलना में सस्ता। स्वतंत्रता के बाद गेहूं चावल आदि का मूल्य यदि पचास गुना बढ़ा है तो तेल कोयला का सत्तर गुना, श्रमका ड़ेढ़ सौ गुना और बुद्धि का हजारों गुना। मनुष्य की सुख सुविधा सुरक्षा और न्याय हमारा साध्य है जबकि अनाज, तेल,कोयला आदि साधन। मनुष्य में भी गरीब ग्रामीण श्रमजीवी किसान को पूंजीपति शहरी बुद्धिजीवी उपभोक्ता वर्ग की अपेक्षा विशेष न्याय की आवश्यकता है जबकि दूसरे वर्ग को विशेष सुरक्षा चाहिए। दोनों के सुख–दुख भिन्न–भिन्न होंगे। डीजल पेट्रोल की मूल्य वृद्धि से किस पर क्या प्रभाव पड़ेगा यह आप स्वयं सोच सकते हैं।

कृत्रिम ऊर्जा मूल्य वृद्धि से अधिक अच्छी तकनीक का आना तो हमारे लिए अच्छी बात होगी। हमें कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य जोर से बढ़ाना चाहिए जिससे उच्च तकनीक आए और इनका प्रयोग कम हो। हम न तो गांधी जी की तरह मशीनीकरण विरोधी हैं न ही मार्क्स की तरह मशीनीकरण का प्रयोग बढ़ाकर लाभ बांटने के समर्थक। हम तो चाहते है कि मशीन और श्रमका संतुलन बना रहे अर्थात श्रम मूल्य के अनुपात में कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य निर्धारित हो। भारत श्रम बाहुल देश है। हमारा श्रम पलायन होकर विदेशों में जाता है। हम उनके श्रम मूल्य से अपनी तुलना क्यों न करें। दुबारा याद करियें कि मनुष्य हमारा

साध्य है और तेल साधन। मनुष्य के लिए तेलों के मूल्य कम अधिक होंगे न कि तेलों के लिए मनुष्य के। मैंने इस विषय पर बहुत गंभीर विवेचना की है आप और विस्तार से लिखें तो मंथन होगा।

मेरी इच्छा है कि आप जैसे प्रबुद्ध व्यक्ति को सेवाग्राम सम्मेलन में आना चाहिए । वहॉ आंदोलन के निमित्त भी आपका उपयोग हो सकेगा। ज्ञान–तत्व का अंक सत्तान्नवे भारत का प्रस्तावित संविधान ही है जो दुबारा ज्ञान तत्व में छपा था। यदि न हो तो भेज देंगे।

(ज)श्री रामतीर्थ अग्रवाल, हरिनगर, नई दिल्ली

प्रश्न — ज्ञान तत्व का अंक नं. 157 मिला है अंक के हाथ में आते ही इसे पढ़ने का प्रयास किया है तथा संक्षिप्त में ही व्यक्त, चन्द बातों ने मन के अन्दर उथल पूथल को जन्म दे दिया है। 'साम्यवाद' राज्य सत्ता का अधिकतम केन्द्रीयकरण होता है और गांधीवाद राज्य सत्ता का अधिकतम अकेन्द्रीयकरण ' (पृष्ठ 2 ,) पन्डित नेहरू गांधीजी के सर्वाधिक विश्वासपात्र व्यक्ति भी रहे और गांधीवाद के प्रबल विरोधी भी ' (पृष्ठ 3) 'संघ परिवार में, विचार मंथन के बाद निष्कर्ष निकालने की उतनी अच्छी परम्परा नहीं, जितनी साम्यवादियों के पास है ' (पृष्ठ 3)

गॉधीवादी तो किसी बुद्धिजीवी को अपने नजदीक फटकते ही उसे चर्खा, कुदाल और खादी लाद देने का प्रयास करते है, इतना ही नहीं हर शब्द ने जिसको कि मैंने पढ़ा है मेरे मानस को प्रभावित किया है तथा मन ये मानता है कि हर शब्द के पीछे जिन्दगी का गहरा अनूभव सम्मिलित है। मेरा अनुभव बना है कि आपके साहित्य में कुछ शब्द पूरी तरह 'नये' आ जाते हैं तथा आम व्यक्ति में उतर नहीं पाता है। इसलिए जो नये शब्द आयें उनकी अलग से व्याख्या स्वयं में एक नये साहित्य और दिशा बोध का सृजन कर सकती है।

श्री दिग्विजय सिंह जी के बारे में जो पृष्ठ सात पर अपने लिखा है उसकी मैं सराहना करता हूॅ। चूंकि उस व्यक्ति के अन्दर मैंने सदैव ही सरलता, सरसता, विशालता, सुनने की ताकत, निर्णय लेने की क्षमता, निडरता, हिम्मत के साथ अपनी बात कहने और रखने की प्रचंडता को अनुभव किया है। "Right to recall "को औसत हिन्दुस्तानी (पृष्ठ 7) जानता भी नहीं है। इसके बारे में अलग से 10–15 लाइनें तो गहरे बोध को जन्म देंगी।

श्री दिग्विजय जी समय के अन्तराल में निश्चित ही एक बड़ी 'पोजीशन' हांसिल करेंगे। वे हमारी चर्चा में हैं, मेरी राय में यह स्थिति ही उनकी बड़ी भारी

पोजीशन है। जो अपने आपको बड़ा कहते हं, उनकी भी आज इस रूप में बुद्धिजीवियों के द्धारा वह चर्चा नहीं होती है जो दिग्विजय जी की हो रही है। उन्हें मैं कभी–कभी देश की सशक्त राजनीति का बहुत बड़ा 'संभावित स्वप्न ' भी मानता हूॅ।

हमारी सफलताओं का 'ढ़िढोरा' कोई भी पीटने वाला नहीं है। आपकी हिन्दु विवाह कानूनों को लेकर जो धारणाएं रही हैं तथा जिन पर सुप्रीमकोर्ट ने परोक्ष रूप में ठप्पा लगाया है बहुत वह बड़ी बात है। इस बात को ज्यादा से ज्यादा पब्लिक में लाया जाना जरूरी है। अपनी बातों का डका हमको ही पीटना होगा । दूसरों को 'ना बातों से मतलब है और न डंके से। हमारे मीडिया वाले मामूली सी सड़ी –सड़ी बात पर टी.बी. पर 3–3 ,4–4 दिन ही नहीं 50–850 दिन निकाल देते हैं जबकि इस मसले को तो मीडिया द्धारा जमकर रगड़ा जाना चाहिए। ताकि दुनिया और समाज को पता लगे कि 'हिन्दु कोड बिल' के द्धारा कितनी गहरी 'गोली' सशक्त परिवार के माथे पर मारी गयी है।

मेरठ के श्री कृष्ण कुमार खन्ना' जी का पत्र, उनका प्रश्न बढ़ा है। आशा करता हूॅ कि वे स्वस्थ होंगे। उनके परिवार में कभी कोई दुर्घटना हो गयी थी उस दौरान वो एम्स में मिले थे, अब तो मान मे ंचाह रहती है, कभी उनके दर्शन हों, चूंकि उनके अन्दर मैंने 'राजा जनक' वाले गुण देखे थे कि दुनिया में रहकर भी दुनिया से पूरी तरह अलग है।

आपके गांधीवाद के बारे में मेरा अनुभव बन रहा है कि यह 'गांधीवाद' कहने के लिए ही 'गांधीवाद ' है जबकि परख करने पवर उससे कई सीढ़ीयां और ऊपर चढ़ जाता हैं। महात्मा गांधी ने अप्रिय लोगों को भी सिर चढ़ा लिया था। उन्हें सत्ता सौंप दी थी, जबकि आजका गांधीवादी ऐसी गलती नहीं करता है।

'राइट टू रिकाल' को लेकर श्री एच.एल. कोहली दिल्ली जी के पत्र ने पुनः झिझोड़ा है। सामाजिक न्याय के सदर्भ में यह महत्वपूर्ण बात है। श्री कोहली जी मुझ से संपर्क करना चाहें तो कर लें, वरना मैं उनके दर्शन और संपर्क कर लूंगा। समान विचारों के लोगों का मिलना और पास बैठना, विचार को अधिक शक्तिवान बनाने के लिए बहुत जरूरी है। मेरा पता (151 ए, सनलाइट कॉलोनी–।। , हरिनगर आश्रम , डी.डी..ए. फ्लैट , नई दिल्ली –14 फोन : 26346424, 9818731302) उन्हें भेजना चाहें तो भेज दें।

टांगे न होने के कारण भागदौड़ के सिलसिले में मेरी कुछ सीमाएं बन जाती हैं, फिर भी जितना कर सकता हूॅ 'देवकृपा' से करता हूॅ। मूल रूप में मेरा जीवन विकलांगों के पुनर्वास के लिए समर्पित रहा है– कुछ बन्धुजन करीब आते हैं तो उनका स्वागत है। मेरे पास 'ज्ञानतत्व आता जरूर है, लेकिन जितना पढ़ा जाना

चाहिए उतना पढ़ा नहीं जाता । कारण आप कोई भी मान सकते हैं। निःसन्देह अंक 157 विचारणीय व संग्रहणीय तो है ही, इस बात की गवाही भी दे रहा है कि हर अंक इतना ही महत्वपूर्ण है। आप स्वस्थ होंगे। स्तर के मित्रों का पूरा पता देना बेहतर रहेगा।

उत्तर — आप एक स्थापित डाक्टर हैं। गंभीर विकलांगता के बावजुद समाज के लिए जो कुछ कर रहे हैं वह प्रशंसनीय है। अंक एक सौ सत्तावन के लेख में आपने गंभीर विवेचना को समझने की कोशिश की है।

मैं मानता हूँ कि मेरे विचारों की व्यापक उपयोगिता हो सकती है किन्तु मेरी भी कुछ सीमाएँ हैं। इन विचारों का उपयोग करना समाज का काम है। समाज आवश्यकता अनुसार करेगा। मैं पूरी तरह संतुष्ट हूँ। मैं अपना काम लगातार कर रहा हूँ। परिणाम की चिन्ता नहीं करता। समीक्षा करता हूँ जो संतोष जनक है।

'राइट टू रिकाल' पर ज्ञानतत्व एक सौ पचास में व्यापक विचार छपा है। इसके विरोध में प्रसिद्ध विद्धार ए.जी. नूरानी के लेख हैं और उसी अंक में मैंने इसके समर्थन में लेख लिखा है। यदि अंक न मिल पाया हो तो सूचित करें। फिर भेज दूंगा।

(झ)श्री के.के. सोमानी, बम्बई महाराष्ट्र

सुझाव — पंचायती राज्य व्यवस्था की प्रशंसा भी सभी राजनैतिक करते हैं और वादा भी किन्तु लागू कोई नहीं करता। सभी लोग पंचायती राज्य व्यवस्था की पूरी नकेल अपने पास ही रखना चाहते हैं। गांधी जी चाहते थें कि पंचायती राज्य व्यवस्था ही लागू हो। हमें चाहिए था कि सौ परिवारों को एक गॉव मानकर पॉच सौ की आवादी पर एक गॉव मान लेते। इससे चुनाव खर्च भी कम आता और संचालन व्यय भी बहुत कम होता। इन ग्राम पंचायतों को अपने टैक्स कलेक्शन से लेकर आन्तरिक पूरी व्यवस्था का अधिकार होता। जो काम ये पंचायते नहीं कर पाती वही ऊपर जाते। इन पंचायतों के ऊपर वाले प्रतिनिधि चुनने का अधिकार होता।

ये पंचायते भू राजस्व वसूल करतीं जो कृषि उत्पादन का पांच प्रतिशन या अधिक होना चाहिए। ये पंचायते प्रत्येक व्यक्ति से माह में एक दिन का वेतन टैक्स के रूप में ले सकती हैं। जो न दे सके वह एक दिन ग्राम पंचायत का काम करके टैक्स पूरा करे। ये पंचायते आवश्यकतानुसार एक या दो प्रतिशत

सम्पत्ति कर भी लगा सकती हैं। इन पंचायतों को इन करों के साथ–साथ विकास कार्यो का दायित्व भी दे दिया जाए।

पर्यावरण प्रदूषण रोकने के लिए वृक्षारोपण के सभी प्रयत्न असफल रहे हैं। सरकारी व्यवस्था सफल हो भी नही सकती। पंचायतों का यह दायित्व हो कि वे अपनी आबादी के आधार पर प्रति व्यक्ति दस ऐसे पेड़ लगावे जो अलग–अलग पांच प्रकार के हों। पंचायतें रासायनिक खाद के स्थान पर गोबर खाद का उपयोग करें।

गांवों मे न्याय पंचायतें भी स्थापित हों जिसकी पद्धति वे स्वयं तय करें। सरकारी न्यायालय अपील सुनें। इस तरह वर्तमान व्यवस्था सुधर सकती है।

उत्तर– इस समय संपूर्ण विश्व के समक्ष आये दस संकटों में से एक महत्वपूर्ण संकट है कि दुनिया भर में राजनीति का भी व्यवसायीकरण हो रहा है और समाज सेवा का भी। राजनीति की तो चर्चा आम हो चुकी है किन्तु समाज सेवा का व्यवसायीकरण भी खतरनाक गति से बढ़ रहा है। पुराने जमाने में व्यवसायी लोग व्यवसाय के अतिरिक्त समाज सेवा में भी सक्रिय रहते थें। इतिहास भरा पड़ा है ऐसी घटनाओं से जब व्यवसाइयों ने समाज सेवा में योगदान किया हो। अब स्थिति इससे ठीक विपरीत हैं अब समाज सेवा को व्यवसाय बनाया जा रहा है। पूरे भारत में ऐसे–ऐसे एन.जी.ओ. की बाढ़ आ रही है जो समाज सेवा के नाम पर व्यवसाय कर रहे हैं। अब तो बड़े–बड़े राजनेताओं तक के परिवार एन.जी.ओ. चला रहे हैं। इन व्यावसायिक समाज सेवकों को जन समर्थन भी मिल रहा है क्योंकि जब भारत की राजनैतिक व्यवस्था ही अपना दायित्व भूलकर व्यवसाय पर उतर गई हो तब प्रशासनिक व्यवसाय की अपेक्षा तो समाज सेवाी व्यवसाय पर उतर गई हो तब प्रशासनिक व्यवसाय की अपेक्षा तो समाज सेवी व्यवसाय लोगों को कम बुरा लगेगा ही। यही कारण है कि कोई भी राजनीतिज्ञ सब समझते हुए भी विकेन्द्रीयकरण की लाइन पर नहीं चलना चाहता। गांधी जी पंचायती राज व्यवस्था चाहते थे। ये नेता लोग ऐसा कभी नहीं चाहते भले ही ये अपने नाम के सामने गांधी ही क्यों न लिखते हों राजीव गांधी ने इस दिशा में एक छोटी सी पहल की किन्तु उसी राजीव गांधी ने दूसरी ओर दलबदल कानून लोकर लोक स्वराज्य का गला भी घोंट दिया। जनता जिसे सांसद चुनती है उस पर नियंत्रण जनता का होना चाहिए। किन्तु उस पर नियंत्रण दल और अप्रत्यक्ष रूप से दल के नेता का होने लगा। अब तो संसद तक के मतदान में बकायदा विहप जारी होता है। सांसद बिक सकते हैं इसलिए उन पर रोक लगाने के नाम पर यह प्रावधान बना। इसका अर्थ हुआ कि दल के नेता तो ईमानदार हैं और उनके सांसद संदेहास्पद । पूरी–पूरी व्यवस्था ही केन्द्रीकरण की लाइन पर है।

यह बात सच है कि सांसद अपने नेताओं को ब्लैक मेल करते थे इसलिए उनके पर कतर दिये गये। अब नई स्थिति यह है कि दल के नेता अपने सांसदों को ब्लैक मेल करते हैं और सांसद चुप रहते हैं। ब्लैक मेलिंग का केन्द्रीयकरण हुआ। पहले सांसदों पर दल का अनुशासन होता था और अब राजीव जी की पहल के बाद अनुशासन की जगह पर शासन हो गया। पहले सांसद खरीद बिक्री की कीमत कुछ लाख तक सीमित थी जो अब करोड़ों में हो गई। अब दल के नेता थोक में सौदे बाजी करने लगे। एक सीधा सा नियम है कि जब व्यवस्था भ्रष्ट हो तो केन्द्रीयकरण घातक होता है। विकेन्द्रीकरण भ्रष्टाचार को भी विकेन्द्रित कर देगा और भ्रष्टाचार व्यापक स्वरूप ग्रहण करके प्रभाव खो देगा। केन्द्रीयकरण से भ्रष्टाचार केन्द्रित होकर शक्तिशाली बन जाता है राजीव गांधी की इस एक भूल का व्यापक दुष्प्रभाव हुआ है। होना तो यह चाहिए था कि सांसदों पर मतदाताओं की लगाम का कोई प्रावधान बनता किन्तु हुआ इससे ठीक उल्टा। हो सकता है कि राजीव गांधी ने यह कार्य ना समझी के कारण किया हो किन्तु इस एक ना समझी का परिणाम बहुत खराब हुआ और आज तक हो रहा है। राजीव गांधी का यह कार्य उनके लिए एक काला अध्याय ही माना जाएगा।

मैने पहले भी लिखा था और फिर लिख रहा हूँ कि न गांधी नाम रखने से किसी का भला होने वाला है न ही गांधी को मात्र मानने से। गांधी को समझने की जरूरत है। इसके लिए सबसे पहली बड़ी बाधा यह है कि इन नेताओं के मन में तो तानाशाही की इच्छा भरी हुई है और मुंह में गांधी का नाम। मुख्य संकट यही है। जब आप जैसा सामान्य व्यक्ति गांधी को विकेन्द्रीयकरण का प्रतिरूप मानकर उन्हें ठीक–ठीक समझ पा रहा है तो ये गांधी नामधारी नेता केन्द्रीयकरण क्यों करने लगते हैं।

आपने अपने सुझावों में ग्राम सभाओं के कर्तव्यों की अधिक विवेचना की है। इन सब सुझावों से राज्य का कोई संबंध नहीं है। यह चर्चा तो ग्रम सभाओं से करनी है। दोनों चर्चाओं को अलग अलग करने की जरूरत है। जेल में बंद व्यक्ति जेल से निकलने की चर्चा करना चाहता है और हम उसे जेल से निकलने के बाद क्या करना है इसके सुझाव दे रहे हैं। कौन सा टैक्स लगाना है, कितने पेड़ लगाने हैं या नहीं लगाने हैं। किस उम्र में विवाह करना है, खेती में कौन सी खाद डालना है ये सब सुझाव लोक स्वराज्य के साथ जोड़ने की आवश्यकता नहीं है।

आज की एक ही जरूरत है कि हम राजनीतिज्ञों से साफ–साफ कह दें कि आप स्वयं को सुरक्षा और न्याय तक सिमटा लीजिए और बाकी काम हम पर छोड़ दीजिए। हम स्वयं कर लेंगे।

आशा है कि आप राज्य और समाज को अलग–अलग सुझाव देने की कृपा करेंगे जिससे कि राज्य आपके सुझावों को किसी शर्त के आधार पर उपयोग न कर सके।